



आकाश गंगा

प्रकाशक :

भालोटिया फाऊन्डेशन

३, न्यू रोड

कलकत्ता-७०००२७

लेखक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं ।

आवरण चित्र

मंजु नाहटा

मूल्य : एक मी रुपया

मुद्रक :

सुराना प्रिन्टिंग वर्कर्स

२०५, रवीन्द्र सरणी,

कलकत्ता-७



अज्ञानात् विभुः



## चिन्त्य-अचिन्त्य

स्रष्टा है वह शब्द—जिममें प्रतिध्वनित होते हैं शिल्प, लालित्य, पडुता, स्पन्दन, चेतना, मर्म और प्राण के ममवेत्त सात स्वर । सम्पूर्ण तत्वों के समीचीन-समावेश का सर्वांगीण उत्तरदायित्व जा मागोपाग निभा सके वही है सर्जक—रचयिता ।

इस रचना-जगत् क विभिन्न आयामों में विशिष्ट स्थान है—साहित्य सर्जक का । वर्णमाला के वैविध्य एवं अक्षर-ब्रह्म की अननुभूत गरिमा को स्वसवेद्य, अनुभूति द्वारा नित्य नवीन अलकरणों से मज्जित कर, अपनी सहज रागानुराग वृत्ति से उसमें प्राण फूँकने वाली मनीषा का यह सृष्टिजगत् भी है उसी महिमामयी सृजन की गौरवशाली परम्परा का अविच्छेद्य अंग ।

नश्वर देहबद्धता की अविनश्वर विराट चेतना से सन्नद्धता का सेद्य है रचनाकार । मानव प्रज्ञा की चौखट पर पड़े मात्र व्यक्तिगत चिन्तन के मृत्तिका-दीप में समष्टिगत सुक्तचेता लौ को प्रज्वलित करता है सरस्वती का वरद पुत्र ही । महाकवि कन्हैयालाल सेठिया हैं आत्मप्रकर्ष की वैसी ही दीपशिखा ।

परम्परा के सतत प्रवाह से मरुपशित रह कर भी महामनीषी सेठियाजी ने अपने प्रवाल द्वीप बत तटस्थ व्यक्तित्व से चिन्तन की लहरियों को रूढ़ियों के आवर्त में आबद्ध नहीं होने दिया है । सशय की शृंखला और निश्चय की बेड़ी को काट कर मानवीय सवैगों का उदात्तीकरण किया है । मुक्ति और गन्धन को सनातन मत्य मानकर सहजता से स्वीकार किया है ।

महाकवि सेठिया ने मगुण साधनों से माघ लिया है निर्गुण को, चिन्तन की ऊर्जा से प्रताडित किया है चिन्ता की मूर्च्छा का, मृगमय मन को चिन्मय बनाया है चित्त चैतन्य से, ममघ का दर्शन किया है अश के माध्यम से, धूम्र को कजल बनाया है अपने स्नेह के सबल से और कविता बिहग के लिये निर्मित किया है कला का नीड अपनी नेखनी से ।

सेठिया-काव्य की मूल शक्ति है शश्वत नृत्यों का मौलिक-चिन्तन

जो स्वयं में समेटे हुए हैं सदाधि के अतल-तल का गाम्भीर्य और सागर का ओर-छोर विहीन विस्तार ।

मनीषी कवि सेठिया स्वाग्नि क सौन्दर्य के सपामक नहीं अपितु पक्षधर हैं ठोस पदार्थ की धरिनी को अपनी प्राण शक्ति से मिचित कर उसे पल्लवित-पुष्पित करने के ।

मानव मन के सतराव-चढाव का जैसा प्रामाणिक परन्तु अछूता, सृज किन्तु आध्यात्मपूत चित्रण कवि सेठिया ने किया है वह उनके प्रौढ-चिन्तन एवं आन्तरिक आत्मीयता का परिचायक है ।

कवि का काव्य पत्थरो पर उत्कीर्ण स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना न होकर, नवनीत कोमल हृत्पटल पर अविरल क्षरित होने वाली वह नेह-नीर-घार है जो भावी पीढ़ियों तक इस सवेदना-स्नेह का पिघलने नहीं देगी ।

यही वामन में विराट का अनुभूत करने की भूमिका है कवि के काव्य-जगत की सार्थक, सशक्त, ससन्दर्भ, समय जा सुखर है स्वयं में ।

दिनांक : २ अक्टूबर, १९६०

राधा भालादिया

## सत्य !

सृष्टि अनादि है या मादि यह विवादास्पद है पर मेरे मानस की आकाश गंगा का अवतरण क्षण का सत्य है। एक किमी प्रत्युप के हिरण्य पुरुष की मध्याह्न तक की यात्रा इस सृजन की कालावधि है। अवश्य कतिपय रचनाओं का प्रसवने किञ्चित् अन्तराल से हुआ है अन्यथा यह कृति एक अभग भाव समाधि की सहज निष्पत्ति है।

कलकत्ता  
२३-७-६०

फन्हैयालाल सेठिया





# विष्णु-चक्र

कोसदुभ	धीवरत
१ आकाश गंगा	१७
२ हस्ताक्षर	१८
३ अनिष्ट-रुद्र	१९
४ उपमा	२०
५ विदेह	२१
६ प्रेरक	२२
७ परिणति	२३
८ कीट-भृंग	२४
९ समन्वय	२५
१० कालजयी कृति	२६
११ अयन्धु बन्धु	२७
१२ असत्-सत्	२८
१३ माया ठगिनी	२९
१४ संधोषण	३०
१५ द्वैताद्वैत	३१
१६ निरवधि	३२
१७ तथ्य	३३
१८ वियोग-संयोग	३४
१९ अप्प दीपो भव	३५
२० प्रश्न	३६
२१ गति-प्रगति	३७
२२ अवगुण-गुण	३८
२३ दृष्टि भेद	३९
२४ सार्थकता	४०
२५ नियति	४१

२६	सृष्टि-दृष्टि	४२
२७	वैशाखी	४३
२८	महज समाधि	४४
२९	असंभव-संभव	४५
३०	प्रकृति-पुरुष	४६
३१	रूपान्तर	४८
३२	सृजन का मत्स्य	४९
३३	पुरुषार्थ	५०
३४	स्वभाव	५१
३५	अक्षमता	५२
३६	आत्म विश्वास	५३
३७	व्याकरण	५४
३८	आभाम	५५
३९	अज्ञान	५६
४०	संस्कार	५७
४१	विकास की यात्रा	५८
४२	विराम-अविराम	५९
४३	व्यवस्था	६०
४४	कुण्ठा मुक्ति	६१
४५	स्वभाव	६२
४६	बन्धु भाव	६३
४७	आश्वासन	६४
४८	स्थानान्तरण	६५
४९	उपयोग	६६
५०	विस्मृत 'स्व'	६७
५१	काल बोध	६८
५२	केवल ज्ञान	६९
५३	। ।	७०
५४	सर्वहारा	७१
५५	। ।	७२

५६ अकिञ्चन	७३
५७ स्वानुभूति	७४
५८ मजीवनी मवेदना	७५
५९ अनामक्त	७६
६० निरपक्ष	७७
६१ गकल्प	७८
६२ कायर	७९
६३ कृनशता	८०
६४ मूर्धन्य	८१
६५ शुद्ध कविता	८०
६६ मोहासक्त	८३
६७ प्रतिक्रिया	८४
६८ अवशेष	८५
६९ पुण्योदय	८६
७० रिक्त-पूर्ण	८७
७१ जिज्ञामा	८८
७२ गति स्थिति	८९
७३ शिशु-मन	९०
७४ विमृच्छा	९१
७५ प्रक्रिया	९०
७६ चित्त्य	९३
७७ भाग्यवती	९४
७८ आत्म धर्मा	९५
७९ पात्रता	९६
८० प्रमत्त	९७
८१ छोटे दिन	९९
८२ प्रवचना	१००
८३ अमग सग	१०१
८४ अनुभूति	१०२
८५ भ्रान्त	१०३

८६ परिभाषा	१०४
८७ उत्कलिका	१०५
८८ भेद विज्ञान	१०६
८९ उत्कर्ष	१०७
९० एकोऽहम बहुश्यामः	
९१ विभ्रम	
९२ मत्र	
९३ भोग-योग	
९४ नाघि	
९५ वामन-विराट	
९६ ज्ञाता	
९७ श्रेयस्	
९८ कूट भाषा	
९९ परमहस	
१०० महादानी	
१०१ पच तत्व	
१०२ अमग	
१०३ अघ-इति	
१०४ विस्मय	
१०५ प्रश्न-उत्तर	
१०६ अदीठ	
१०७ स्वगत	
१०८ स्वीकारोक्ति	
१०९ विराम	
११० व्यक्ति-भीड़	
१११ सार्थक क्षण	
११२ ममस्या	
११३ मृत्तिका	
११४ पेठ	
११५ देह निपग	

कीर्तुभ

भीवत्त

११६ मन्दर्भ	१३५
११७ मम्बोधि	१३६
११८ शहर-गाव	१३७
११९ अमृत-रम	१३८
१२० मत्त	१३९
१२१ आत्मा	१४०
१२२ अनुभूति	१४१
१२३ कृतघ्न	१४२
१२४ परमेश्वर	१४३
१२५ संवेदना का सत्य	१४४
१२६ विडम्बना	१४५
१२७ दुर्घटनाएँ	१४६
१२८ मसुद्र	१४७
१२९ सपेक्षिता	१४८



तनय  
जय, विनय  
तनय यघू  
कनक, पुष्पा  
को





आकाश गंगा !

बहकर  
तिनिर के  
प्राण-प्रदेश में  
हो आती विदुष  
ज्योति सलिला  
आकाश गंगा  
दिवस के मरुस्थल में  
पर  
सुनकर  
सत अन्तः प्रवाहिनी का  
मल बल  
निनाद  
रचता  
ऋषि सूर्य  
रश्मियों की ऋचाएँ  
सद्भाषित्व जिनसे  
वेद रूप आकाश !

हस्ताक्षर !

बादल की पाती  
बूँदों के अक्षर,  
अम्बर ने भेजी  
धरती को लिखकर,  
सम्बोधन इन्द्र धनुष  
विजली हस्ताक्षर !

अनिन्द्य रत्न !

जय तक है  
शाब्दाओं में  
मूल का सत्य  
होती रहेगी चनकी  
हरितिमा  
पल्लवित, पुष्पित, फलित,  
छूटते ही  
चेतना का सम्पर्क  
बन जायेगा ठूँठ  
अस्तित्व का झूठ !  
जानकर जिसे  
चढ़ जायेगा  
भूखा विहंग  
निक्षेप कर एक अवहेलना की दृष्टि !

**उपमा !**

रिक्त नीड  
विरहिन की  
साँख !

विदेह !

कब से  
चत्कीर्ण कर रहा हूँ  
शब्दों के शिलाखंडों में  
भावनाओं की प्रतिमाएँ  
पर नहीं उकेर पाया अब तक  
सस क्वारे सपन की  
छवि  
जिसे देखा था आगते में ।

प्रेरक !

ओ मौन अरण्य ।

कैसे रख देते

कोयल के कंठ में तुम

पंचम का संगीत

कि प्रतिध्वनित क्षितिज

होकर नमित

छूता तुम्हारे चरण

भूल कर

पिता

आकाश की

अनन्तता ।

परिणति !

दष्ट  
वर्तिका,  
रूप  
चिन्गारी,  
निःशेष स्नेह  
निष्पत्ति  
वासना  
कजल !



कीट भृंग !

सवेदना की  
दमर बल्लिका  
कुसुमित सुमन  
मेरा गीत  
बन जाता जिसकी  
सुरभि से  
प्राण  
महा प्राण !

**समन्वय !**

गाता  
समीर वीन पर सिन्धु  
बादल राग,  
करती नृत्य  
तन्वगी दामिनी,  
भींग छठती  
रस से  
घरती कामिनी !

कालजयी कृति !

विभाजित

शाखाओं

कलियों

गुमनों

फलों के

सर्गों के

महाकाव्य किटप,

नायक

बीज

नायिका अर्द्ध ।

अबन्धु-बन्धु !

आ गया

अपने से कितनी दूर  
मरीचिका के पीछे !

भूल गया

प्राण का अमृत कुण्ड  
जहाँ पी सकती थी  
छक कर चेतना,

भ्रान्त, दिशाहारा  
कैसे लौटू पुनः मृगवन में ?

मिट गये

वासना की झुम्का में  
पर्याकृत चरण चिन्ह  
अब तो प्रतीक्षा है

अबन्धु अन्धकार की  
जब देगा सुझे

दिशा बोध

हमहारी कुटिया का  
स्नेहालोकित

अकिञ्चन दीप !

असत् सत् !

भूमिका  
दीप्ति की  
धूम,  
उपसंहार  
कीचड़ का  
कमल !

## माया ठगिनी !

देख जलद कारे  
बैठी पनिहारिन  
रीती कर गागर,

बूंद नहीं बरसी  
लौट गये निष्ठुर  
द्वारे तक आकर,

छलना थी आशा  
प्राण रहा प्यासा  
आकुल मन मारे,

गहन हुई पीडा  
दरकाते आँसू  
लोचन रतनारे !

संपोषण !

मिलते ही  
सर्वरक तिमिर  
फूटते  
ज्योति के अक्षुर  
नक्षत्र ।

टै ताद्वैत !

अभिव्यक्ति  
दिवस की  
जला हुआ दीप,

अनुभूति  
निशा की  
बुझा हुआ दीप,

स्मृति द्वैत  
विस्मृति अद्वैत !



**निरवधि ।**

नहीं होता  
प्रार्थना का  
कोई समय  
अप्रमत्त का  
हर क्षण  
प्रार्थनालय ।



## चियोग-संयोग !

टेर रहा  
नंगी पतझरी  
मांकु में  
एकाकी बनपाखी  
कोई विरह गीत,  
भर जाता सुन जिसे  
एक अशांत व्याशुका से  
क्षितिज से लौटते  
पंछी का मन  
पर जाग उठती  
प्राण में पुलकन  
उस क्षण  
जब सहमा  
मिल जाते  
नीड में बैठी  
आसन्न प्रसवा  
नयन !

अप्य दीपो भव !

पडे हैं  
तथाकथित मत्स्य के  
पथ पर  
म्बडित विज्वामा के  
असम्भ दृक्छे,  
श्रद्धा के अँसुओं की  
किमलन भरी कीच,  
दुरायह के नुकीले  
अवरोधक शूल,  
चाहते  
अगर पहुँचना  
लक्ष्य पर  
रचनी होगी  
अपने चरणों की  
गति से  
एक बूझारी पगडण्डी  
अन्यथा  
रह जाओगे  
बन कर  
मात्र दुर्यटना  
इम अन्धी भीड़ से भरे  
धोखे क  
राजपथ पर ।

प्रश्न !

संलग्न  
क्षण से  
अशेष चिरन्तन,

सपृक्त्  
द्वार से  
विस्तृत आंगन,

बाधे  
नागफणी  
गुलाब का वन,

बिना किये  
पार  
कुंठार्ण  
कैसे होगा अनुभूत

सत्यम्

शिवम्

सन्दरभ ।

गति-प्रगति !

घरते ही  
प्रथम सोपान पर  
चरण  
अनुभूत होंगी  
मृग की  
समीपता !

**अचगुण-गुण !**

बिना छिद्र

नहीं बन पाता

मिट्टी का लादा

## दृष्टि भेद !

दलते रवि को देख  
सुमन का मन सुरझा जाता है,  
वन श्री का शृ गार लूटने  
तिमिर दस्यु आता है,

उगते रवि को देख  
दीप का प्राण पुलक जाता है,  
हुह तपस्या मफल स्वयं  
निर्वाण चला आता है,

भाग त्याग की दृष्टि भिन्न है  
भिन्न घटित का चिन्तन,  
प्रेयस् श्रेयस् से अनुपन्धित  
राग अराग चिन्तन ।



सार्थकता ।

जिओ

आगत का

इस तरह

कि नहीं वने वह

गत का

इतिहास

रहे

जीवन्त

बनकर

अनागत का

दर्शन ।

नियति !

देता

शूल फूल

दोनो को विटप

चेतना का रस,

घनता

कर्म विपाक के

अनुसार

चुभन या सौरभ ।

# सृष्टि-दृष्टि !

एक फल में  
अमरुद्वय बीज  
सृष्टि का गणित,  
दृष्टि का दर्शन ।

**वैसाखी !**

छुट जाता

जब

लिखते समय

किमी कालजयी कृति की

महत्वपूर्ण पंक्ति का

एक अर्थपूर्ण शब्द

तो लगछा जाता

समय कृतित्व का

सत्य,

चाहिये उसे फिर

अन्वेषित करने के लिये

किमी मनीषी की

अनुभूति की वैसाखी ।

सहज समाधि !

लगाती

व्यर्थ

फेरे

मन चली

तितली,

बिना किय

अनुभूत

मुराभि का मत्य

नहीं खोलेगी

आंख

कली ।

असंभव संभव !

नही कर  
सकता  
जहाँ जाने का  
साहस  
राजपथ  
वहाँ  
जाती  
दुर्बल पगडंडी ।

## प्रकृति-पुरुष !

हिम कन्या  
उतरी  
छोड़ शिखर  
अनुनादित करती  
वन-प्रान्तर,  
चलता  
तरंग मिस  
चिर चिन्तन,  
क्या लवणोदधि में  
आकर्षण !  
ये हरे भरे  
कातार, बिजन  
झरते त्रिटपो से  
कलित सुमन,  
खग गाते  
करते मधुवर्षण,  
चरते दूर्वा  
हेमाभ-हिरण !  
गुड जाते इनको देख  
नयन,  
व्यति सुन्दर रे  
यह लुबि शोभन,  
पर गर्जित पौरुष का  
आमन्त्रण  
सुन होता  
सरि का मन  
चुम्बन,

कर देती  
रुम क्षण  
वह अर्पण  
अपने यौवन का  
मचित्त धन,  
यह प्रकृति-पुरुष का  
महज मिलन  
हां जाता जीवन  
धन्य, उमृण ।



## रूपान्तर ।

प्रतिमा  
बनने से  
पहने भी था  
पत्थर का  
अपना आकार,  
तभी ही पाया  
उसमें  
शिल्पी का स्वप्न  
छेनी का मत्स्य  
साकार ।

**सृजन का सत्य !**

आवश्यक है  
क्रान्ति के लिये  
हृदय की शान्ति,  
अन्यथा  
केवल भ्रान्ति  
विचारों की  
ऊहापोह !

## पुरुषार्थ !

चाहते

अगर तैरना

सिन्धु,

छोड़ना होगा

कुल का मोह,

करना होगा

द्रोह

उन परम्पराओं से

जो देती हैं

अनुभव की

अपेक्षा

सुरक्षा को प्राथमिकता ।

स्वभाव !

नहीं कर

पाता

मागर की मीठा

मरिताओं का समर्पण,

कर सकता

प्रचण्ड सूर्य

सुमे विवश

रचने के लिये

पीयूष वर्षा मेघ !

**अक्षमता !**

**बहुता**

**प्रवाह में**

**असहाय तृण**

**सर्तोप कर**

**अपनी**

**अन्धी-गति पर !**

**आत्म विश्वास !**

जननी

चट्टान की अंक में  
मच्चलता शिशु निर्झर

भरता निशंक

शून्य में छलांग

बयों कि

नीचे है

घात्री घरित्री !

**व्याकरण !**

**दीप शिखा  
तिमिर आलेश्वर के  
समक्ष  
विराम !**

आभास !

भोर

एक चुटकी

कपूर,

सांझ

एक चुटकी

कस्तूरी !



अज्ञान !

मान लेता

भूमित मन

हर ऋतु को

असीम काल की सीमा,

वह है

पानी में खिंची लकीर

कर लेता जिसे

पलक झंपते

अपने में लीन

अनन्त प्रवाह !

मंस्कार !

रिक्त पात्र मे

भी

रह जाता

पूर्णता का चिन्ह !

## विकास की यात्रा !

बिना दूक  
धरती के  
स्नेहांचल में  
नहीं खोलेंगे  
शिशु बीज  
प्रकाश की  
चकाचांध में धौंख ।

**चिराम-अचिराम !**

बीतते ही

सुद्ध विराम का

क्षण

फूटगा

समय का कृष्ण

सूर्य का पाचजन्य

हो उठेगा

फिर जीवन्त

जीवन का कुरुक्षेत्र ।

**व्यथरूपा !**

भर दिये  
मिन्धु ने  
जलद घट  
अम्बर के  
पनपट पर,  
ले जायेगी  
पवन पनिहारिन  
इन्हें  
घरती के घर ।

## कुण्ठा मुक्ति !

मन की  
कोमल अनुभूति की  
अभिव्यक्ति का  
माध्यम  
कठोर शिलाखंड,  
कर सकता  
अवरोध को  
तोड़कर  
जीवन शिल्पी  
आराध्य का दर्शन !

स्वभाय !

खोजता

प्रकाश भी छिद्र

करने

बालोक्ति

अन्धकार का

अंतस्तल !

**बन्धु भाव !**

देखता हूँ  
जब भी कोई  
एकाकी विटप  
ललक उठता  
उसे बाह में  
भरने  
मेरे भीतर का  
अरण्य ।



**आश्वासन !**

नहीं रहेगा

अवशेष

मेरे पात्र में

तुम्हारा कोई देय ।

लीटा दूंगा

वितरित कर

हाथों हाथ

इसमें पहले कि

थके

तुम्हारी प्रतीक्षा !

## स्थानान्तरण !

थी जो  
अर्गला  
मन में  
वह लग गई  
अब द्वार पर,  
रहेगी  
प्रतिक्षण  
चित्तन में  
जाते समय  
बाहर भीतर !

उपयोग !

पीडा

मेरी कामधेनु,

दूहता गीत दूध

जब भी मताती

चेतना को

भव तृषा !

धिस्मृत 'म्व' !

गुड़ जाता  
स्थितियों से मन,  
सुखड़ जाता  
स्थितियों से मन,  
मानता  
स्थितियों को  
सत्य  
जबकि वह  
अपने में  
निरंजन ।

**काल योध !**

समझ गया

क्षण का मूल्य,  
नहीं करूँगा उसे

विक्रय

अब

बधिक प्रमाद के हाथ !

केवल ज्ञान !

नही  
बुद्धि की  
प्रतिक्रिया  
केवल  
वह किया  
प्रज्ञा की ।

## मिथ्याभिमान !

राजसूय यज्ञ के  
छुटे अश्व सा  
अयोध मन  
घूम आया  
चतुर्दिक  
नहीं पकड़ी  
किसी ने बल्गा,  
खूंदता  
पैरो तले की धरती,  
हिनहिनाता  
प्राण का दर्प  
सहसा  
पड गई म्लान  
देह की वृत्ति,  
झरने लगे  
मुख से झग,  
कर गया दंशित  
हृदय विवर में  
द्विपा  
सशय सर्प,  
जब नहीं  
थपथपाई  
हयशाला की  
स्वामिनी  
चेतना ने  
अन्धे अहम की पीठ !

सर्वहारा !

आने को है  
अंतिम पड़ाव  
जहाँ  
छोटना होगा  
शब्द का पायेय ।



प्रकृतिस्थ !

बड़ा है  
घेर कर  
दीप की लौ  
अन्धकार  
नहीं कर पाता  
बलात्कार  
क्यों कि  
जानता है  
वह मर्यादा ।

अकिञ्चन !

आषा षा

जैसे

निभरि

पहुँचूँगा

वैसे ही

तुम्हारे द्वार,

नहीं लेनी

पड़ेगी

मेरी नंगा क़ोरी !

## स्वानुभूति !

मत कतर  
धर्रा की कँची से  
जिज्ञासा के पंख,  
नही होगा  
अनुभूत  
बिना भरे उडान  
आँखों में  
प्रतिबिम्बित  
महाकाश !

## संजीवनी संवेदना !

टूट गया

आषा धापी में

आकंठ भरा

अमृत का कुम्भ,

उगल दिया

कुपित शिव ने

पिया हुआ गरल,

अब कहीं मन्दराचल !

धिवर गत शेष नाग

नहीं झूलने को प्रमथत

दुवारा मंधन की पीड़ा

विदुग्ध पारावार,

अब तो बचा सकता

विदग्ध विश्व को बह

ओं नकार मके

मिहामन के लिये तलवार

डुकरा मके

अदम्य वाग्मना की मनुहार

करुणा का अवतार

संवेदना का राजकुमार

कोई प्रबुद्ध बुद्ध !

अनासक्त !

पथ क

लिये गौण है

गमन

आगमन

वह है

केवल

गति का साक्षी ।

निरपेक्ष !

साक्षी

सत्य का

केवल सत्य

नहीं

उसे

किसी मन्दर्भ की

अपेक्षा !

संकल्प !

किया

सृजित

कुम्भकार ने

आज

और एक दीप,

नहीं टूटने देगा वह

ज्योति की शृंगला

पकड़ जिसे

चढ़ जायेगा फिर

फिमल कर गिरा

सूरज

वाकाश की मुँहेर पर ।

काथर !

लिखी

हुवा स्नेह में

नन्हे दीप ने

लौ की कलम

पिता सूरज को पातो,

फट गई

सुन कर

सधा की लालिमा मिम

बेचारी कालिमा की छाती ।



संघर्ष !

किया

सृजित

कुम्भकार ने

आज

और एक दीप,

नहीं टूटने देगा वह

ज्योति की शृंगला

पकड़ जिसे

चढ़ जायेगा फिर

फिसल कर गिरा

सूरज

आकाश की मुँडेर पर ।

कायर !

लिखी

हुवा स्नेह में

नन्हे दीप ने

लौ की कलम

पिता सूरज को पातो,

फट गई

सुन कर

उषा की लालिमा मिस

बेचारी कालिमा की छाती ।

कृतज्ञता !

बैठ गई जब  
मार कुण्डली  
मावस नागिन  
घात में,  
मौ सूरज की  
आख बन गया  
दीप अकेला  
रात में,

सहम, बच गई  
दृष्टि पथिक की  
महाकाल के  
दश से,  
स्रृण नहीं  
हो सकता जीवन  
कभी विभा के  
वश से ।

मूर्धन्य !

हर आकार के  
सिर पर है  
निराकार का वरदहस्त,

हर सृजन से  
शुद्धी है  
अलख काल की भूमिका,

हर विकास  
चलता है  
थाम कर प्रकाश की अंगुली,

हर प्राण की  
धडकन है  
महाप्राण समीर,

पर सबसे बड़ी  
पैरो तले पछी  
धरती  
अचिर्य है  
बिना जिसके  
अस्तित्व की कल्पना !

## शुद्ध कविता !

आज लगा कि  
बहुत समीप आ गया  
घर के सामने का पेड़,  
क्या हुआ है कोई  
मेरी धुंधली दृष्टि को घोखा ?  
या बैठा हूँ कुर्मा पर  
किसी नये कोण से ?  
स्पष्ट दिखती है  
हवा से खेलती  
नन्हीं कोपलें,  
चटक रंगों में से झाकती  
अधखिली कलियाँ,  
नीला में बैठे  
ममत्वपूर्ण नयन,  
सहसा टूट गई  
बिह्वी की भ्याऊ से मेरी तन्द्रा  
लगा कि खडा है  
सदा की दूरी पर ही वह पेड़  
हा गई है केवल  
अथ और अधिक गहरी  
उसके साथ मेरी सवेदना ।

मोहासक्त !

खिल कर  
मर जाता  
कितनी सहजता से  
हरमिगार !  
कहां  
गुलाब में  
यह व्यसंग भाव !

नहीं होता  
राग मुक्त  
सुरझाने तक !

## प्रतिक्रिया !

मने ही  
गुदला देता  
क्षण भर के लिये  
कोलाहल  
सन्नाटे को  
पर दूसरे ही क्षण  
कर लेता वह  
आत्महत्या  
कुद कर  
उसके गहन अतल में ।

अवशेष !

गुलते  
भोर की  
आख  
फर जाते  
सपनों के हरसिंगार  
रह जाती  
गगन के मन में  
केवल  
स्मृतियों की  
बासी गन्ध ।



## पुण्योदय !

हुआ  
कितने वर्षों बाद  
पुष्पित  
गमले का  
गाछ,  
शायद  
यह कोई गौतम  
धाया है अब  
जिरके तपःपूत प्राण में  
पी कर  
किसी सुजाता मालिन के  
हाथ से संवेदना का नीर  
बोधि का क्षण !

रिक्त-पूर्ण !

झर गया  
समय की  
डाल से अंधेरे का  
तारामुखी फूल,  
लगता  
दृष्टि को  
दिवस सा  
रिक्त वृन्त !

जिज्ञासा !

कहाँ है

विचार का

उत्स ?

नहीं

केवल

दृश्य वातावरण

अन्यथा

कैसे करता

अनुभूत

सूरदास

जीवन का

रूपात्मक सौन्दर्य ?

## गति-स्थिति !

पहुँच कर  
सिन्धु के समीप  
हो गयी  
संयत  
उच्छृंखल नदी,  
कर लेता  
स्व में समाहित  
धाराध्य  
समर्पिता की गति !

शिशु-मन !

समय के

गरुड का अण्डा

दिन,

काली चितकवरी

बकरियों का

झुन्ड

रात,

हो उठता

इन कल्पनाओं के वहाने

जीमन्त,

नटखट बचपन

जब

गवई सत्य था

जीवन का दर्शन ।

## चिमूच्छा !

खड़ी

ठगी मृगी नी

तारक सुमनो से सुरभित

अस्ताचल की घाटी में

शरद पूनम की मास,

भूल कर

काल अहेरी का

जो था रहा

दवे पाव

लेकर

उदयाचल की आट ।

**प्रक्रिया !**

जुड़ा है

किसलयों

कलिया

काटो से

बीज का

फल बनने का

क्रम,

नहीं धर सकेगा कोई

सृजन की

प्रक्रिया में

बदलाव

करना होगा

हृदयगम

यह सत्य

अन्यथा

छलता रहेगा

उपलब्धि का क्षण !

चित्त !

कर लिया

खडा

जड शब्दों का

हिमालय

प्राण की चेतना पर,

नहीं हुई

निसृत

स्वानुभूति की गंगा

मिला देती जो

उस सिन्धु से

रचती है जिसकी

उद्वेलित सवेदना

शून्य में

तृपित घरती के लिये

पीयूष वर्षों भेघ ।



भाग्यघती !

गई

अभी अभी

वीन कर मालिन

गजरे के लिए

कलिया

रही अनदेखी जो

सज गई उनसे

सुन्दरी सांझ की

कबरी ।

आत्मधर्मा !

दो  
लौ को  
कोई दिशा  
होगी  
विभासित  
उमसे निशा,  
हुई  
दीप से  
बद्ध कव  
विभा !  
पहुँचती  
हर नयन  
रश्मिपदा प्रभा !

पात्रता !

दुकरा दिया  
दुर्योधन ने  
मधि प्रस्ताव  
क्या कि  
विमूर्च्छित था  
हृदय का  
भागवत अश,  
हो गया  
सन्नद्ध  
युद्धार्थ  
भीत पार्थ  
क्या कि  
जाग गया था  
निद्रित  
गीता तत्त्व ।

प्रमत्त !

सहसा आये घिर  
नवजात शिशु शरद के  
नयनों में  
सावनी नेव  
बरसने लगे  
घारा रुम्पाठ,  
ठिठक गये  
दक्षिणायन सुन्धी  
दिवाकर के रथ के  
मग्न अर्ध,  
पकियाये धुने पथ  
बिसूरती उभित हिमानी  
गदलाया नदियों का मन,  
महम गई  
मद्य प्रमत्ता घरती  
नहीं भाया प्रकृति को  
पुरुष का यह  
प्रणयोन्नाद  
कजलाई  
मरकती हरितिमा,  
सुंभलाई  
चटक रंगों में मजी  
अरण्यानी  
हो गये मौन  
चहकते नीड़  
सिमटें फैले पंख,  
नर्क कर मर्क

अनुभूत  
विप्रलम्भा  
प्रतीक्षा का सुख ।

छोटे दिन !

छिले

मिघाडे से

कच्चे

ये

शीत के दिन

बिक जाते

हाथों हाथ,

चला जाता

अममय में

समय

ठेलता हुआ

रात का खाली ठेला

बिखरी हुई

जिसमें

तारों की रेजगारियां !

प्रयचना ।

निहार कर

दपंष

यन जाती

उत्कंठा

बन्धन,

करता

बाल हठ

मन

देखने

क्षमगुण्ठन,

चला जाता

अनदेखा

इस व्यामोह में

दर्शन का

क्षण ।

असंग-संग !

छुड़ा

सन्दर्भ हीन

महाशून्य से

सृष्टि का मन्दर्भ,

होकर

अस्थित में स्थित

बरसता

पुरुष का

पुंसत्व मेघ

करती

धारण

प्रकृति गर्भ

होती प्रतीति तब

उद्भव का

कारण

अकारण !



## अनुभूति !

बीनी  
सूरज ने  
आदल की  
डलिया में  
वारिधि की  
बगिया से  
बूंदों की कलियां,  
घरमाता अम्बर  
अजलि में भरकर  
कण कण  
सगुण हुईं  
माटी निरगुणिया ।

भ्रान्त !

महाराते

गन्ध विह्वल मधुप

पारिजात पुष्पाच्छादित

कालकूट के हेमकुम्भ पर

विस्मृत कर

चेतना सुमेरु से

निसृत

सुधा मन्दाकिनी

मौचती जो

अहर्निश

प्राण का

नैसर्गिक नन्दन !

**परिभाषा !**

नहीं लगती  
जिस  
सत्य की आब  
भो जाते  
उसके अघर  
कहते जिसे  
चेतना की भाषा में  
मौन ।

उत्कलिका !

खड़ा

शुष्क सरिता के

तट पर

पुकार रहा

कामान्ध पाराशर

बो मत्स्यगन्धा

पार कर

नाव खे कर !

# भेद विज्ञान !

स्वल्पेन

क्षण

का

अनन्त भ्रमण

स्फुरण

आत्म दर्शन ।

उत्कर्ष !

खिल कर  
दीप की लौ  
बन  
जाती  
मचेरे का फूल ।

सुरक्षा कर  
मंझधार की लहर  
बन जाती  
भागर का झूल ।

एकोऽहम् बहुस्यामः ।

चूसते

शिशु

मा का स्तन,

पीते

फल

पादप का रस,

नहीं वहाँ

देह का द्वैत

केवल

पूर्णत्व में

व्यक्त

आत्मा का

अद्वैत ।

चिभूम !

अम्बर सर में  
खिला  
कनक का  
कमल दिवाकर,

पी उड़ता रस  
नित्य  
तिमिर का  
लोलुप मधुकर

शाश्वत यह  
व्यापार  
प्रणय का  
साक्षी तारे,

दिवा निशा का  
भूम  
पाले हैं  
दग बेचारे !



मंत्र !

ककमोरने में  
चेतना को  
अधिक मक्षम है  
साथक शुब्द की अपेक्षा  
निरथक ध्वनि,  
नही होता  
उद्देलित नीर  
हृदय में पडी  
अमून्य मणि मुक्ताओं से  
चाहिये उसे  
मूल्यहीन पाषाण ।

भोग-योग ।

चाहिं

कल्पि हंसे के निन्द

चिन्तारि के

सन्देह मंजु के

या

रुद्ध समुद्र के

दुहा

समान कद के

सुन्दरी केरु के

राग मंगल के

पर मदन के

परिवर्त

कादल

दुधरे के

विद्वान् ।

बोध !

क्या है  
भाव से  
विचार  
विचार से  
शब्द बनने की  
प्रक्रिया ?  
अक्षम  
जानने में  
विज्ञान की आंख  
खोलेंगा धाँख  
रहस्य की  
अतः बोध के  
आकाश में  
चेतना का हस्त ।

## वामन-धिराट !

कर देती  
अर्जरित  
तिमिर का  
इस्पाती कवच  
दीप की  
नन्ही किरण,

दे देती  
चिर परिचित  
वातावरण को  
नया अर्थ  
फूल की  
हलकी महक ।

बना देती  
मजिल की  
दूरी को  
वामन  
गीत की  
एकाघ कडी ।

घाता !

बैठा

तिरहाने

सम्राट दुर्वोधन,

पैताने

सर्वहारा अर्जुन,

काम्य थी

छसे

केवल

रष्टि ।

धेयस् !

व्यतिक्रमण !

समीक्षा

प्रतिक्रमण

करता

क्षण क्षण

वह्

भ्रमण,

होती चेतना

निरावरण,

छुटवे

मरण

यमता

भव भ्रमण,

सहज

मोक्ष

स्व-शरण !

कूट भाषा !

मोख ली

आकाश के

ब्लार्टिंग पेपर ने

अधरे की

गीली स्याही

दिखने लगे स्पष्ट

समय की पाती पर

लिखे

नखत अक्षर,

हुये आश्चस्त

पट कर

विरहिन घरती के

दीप नयन

लिखी थी

प्रवासी पति

सूरज ने

गूढ लिपि में

प्रत्यागमन की

सूचना !

परमहंस !

व्यवस्थित  
स्व में जो  
नहीं  
उसके लिये  
कोई  
शब्द जन्य  
विधान,  
संवेदनामय  
अनुकम्पा  
चेतना की  
पूर्णता का  
बाह्याभास ।



महादानी !

डाल दिये

भिक्षुणी संध्या की

रिक्त झोली में

अम्बर ने

असंख्य नखतों के

रजत सियके,

बची रही केवल

अतःपुर की

समय गजदन्ती पर टके

गुलाबी अंगरखे की जेब में

सूर्य की एक

स्वर्ण सुझा ।

## पंच तत्त्व !

आवृद्ध  
काल घर्म<sup>१</sup> से  
अनिल  
अनल  
सलिल  
भूतल,  
सुक्त  
केवल  
क्षण के  
सत्य से  
महाकाश †

असंग ।

नहीं

सफलधि

फल

केवल

निष्पत्ति

विकास के

क्रम की

त्याग देती

जिसे

सहज भाव से

बीज की

असंग चेतना ।

**अथ-इति !**

होते ही

अन्वय

चिन्मय

मृण्मय

वन गया

समय वय

अपरिचय

परिचय

निश्चय

संशय

अक्षय

क्षय !

चिस्मय !

आया

शीत

भीत

बसन्त

थोड़े

कुहासे का कम्बल,

कहाँ

किमलय, कौपल

कलिया, कोयल !

जोहता बाट

धातान

अपलक

नहीं लौटा

परदेशी मलयानिल अब तक

हो गया

समय

कितना सविदनहीन

कि

नहीं गुदगुदाती

उसे

पहली

मधुमासी मोर !

## प्रश्न-उत्तर !

हुआ है क्या  
इच्छा से  
जन्म ?  
मिले है  
चयनित  
माता पिता ?  
है मनोनुकूल  
रंग, रूप  
देह, वय  
स्वभाव, स्थितियाँ ?  
या  
मात्र दुर्घटना  
अस्तित्व ?  
अव्यवस्था की सपज  
रुम  
चाहते  
विचार के अनुसार  
व्यवस्था  
कितने अमहाय  
कितने दयनीय ?  
नहीं क्या  
तुम्हारे स्व की  
कोई अन्मिता ?  
चाहते  
अगर ममाधान,  
लौटो  
चेतना के सग स्तर पर

जहाँ  
देगी  
अमिब्यक्ति जनित  
इन प्रश्नों का  
सटीक उत्तर  
विदेह  
अनुभूति ।

अदीठ !

झरता

निरन्तर

अम्बर

हिमगिरि से

समय निर्झर,

समेटे

बाहों में इसे

जन्म मरण के

द्वय कूल,

मिलती

किस अनदेखे सागर में

अलख धार ?

नहीं खोज पाया

आज तक

भोर से साँझ तक

भटकता

प्यासा बनजारा

सूरज !



स्वगत !

रहो

न कहो

सहो,

गहो

न बहो

दहो,

सुरज तुम

दहो !

## स्वीकारोक्ति !

नहीं होगी  
कभी उत्पन्न  
सृजन घर्मी चेतना  
समाज से  
की जिसने नियंत्रित  
बिना किये  
पिंजडे में बन्द  
मानव-पशु की  
उद्दाम वासनाएँ,  
रचे  
सामूहिक भय ने  
सापेक्षित जीवन मूल्य  
किया  
जिन्होंने बाध्य  
स्वीकारने के लिये  
सह अस्तित्व का  
मूलभूत अनुबन्ध !

**विराम !**

मान कर

भय को

विवेक का,

प्रेम को

वासना का,

घृणा को

अनासक्ति का,

पर्याय वाची

नकार दिया गया

हृद

अन्तरमुखी जीवन मूल्यों को

जिन्हें

कर सकती

अनुभूत केवल

दैहिक कूंठाओं से

मुक्त

निरपेक्ष चेतना ।

## व्यक्ति-भीड़ !

रहती  
व्यक्ति के मुखौटे में  
छिपी  
वासनाओं की  
एक अनियन्त्रित भीड़  
जो नहीं रहने देती  
उसे  
अपने में उपस्थित,  
करता रहता  
आतुर मन  
प्रति क्षण  
लक्ष्मण रेखा का  
अतिक्रमण,  
नहीं जानता  
वह अबोध  
कर रही  
अराजकता  
दबे पाव  
उसका  
अनुसरण ।

साथक क्षण !

जनमते हैं  
प्रतिकूल  
परिस्थितियों की  
कोख से ही  
साथक क्षण  
जो  
देते हैं  
विजडित  
चेतना को  
दिशा बोध,  
तोड़ते हैं  
अवरोध  
रुद्ध हुई  
सृजन की गंगा का  
जिसे ले आया था  
शिव के जटाजूट से  
सुँठ कर  
उन का पुरखा  
समय का भगीरथ ।

समस्या !

नहीं

निकलती

अचानक

साँप की तरह

किसी बिबर से

कोई समस्या ।

नहीं कोई

किसी सपेरे की बीन

उसका निदान ।

यह तो

आदमी की

क्षमता की उपज,

पशु से अधिक

उसकी समझ

यह बोध

हर समस्या का मूल,

समाधान

उस का फूल

जिसके

मधु कोष में हैं

फिर

अनगिन समस्याओं के बीज ।

# मृत्तिका !

किंग ने

किया

इस सजीवनी

मिट्टी को

मृत्तिका की रक्षा से

अभिर्मदित !

यह भूति

श्वय मिद्धा

विभूति,

इसी के

माध्यम से

परिभाषित

सृजन का सत्य,

विसर्जन का शिवम्,

सुन्दरम् की अभिव्यक्ति !

पेड़ ।

नहीं करता  
कभी कोई  
मजिल की कामना  
सड़क के किनारे खड़ा  
यह पेड़,  
ठहरते हैं  
इसकी छाया में  
आधुनिकतम वाहन  
नहीं ललचाती  
कभी उसे  
गद्देदार सीटें  
रंगीन  
मिडकिया  
क्यों कि वह जानता है  
कहीं नहीं ले जाती  
इन भटके हुये  
लोगों को  
कोई भी यात्रा ।



देह-निपंग !

प्राण-धनुष पर  
चढी आयु-ज्या  
सतन् मांस  
शर वर्षण,  
बेध लक्ष्य  
फैकेगा अन्तक  
देह-निपंग  
उसी क्षण ।

## सम्बोध !

शूल नहीं चुभते तो सुक्त को  
फूलों से अनुराग न होता ।

दिया मुझे तम ने ही चिन्तन  
में मिट्टी का दीप बनाऊँ,  
अनबोली पीड़ा का इगित  
अनहद को छन्दो ने गाऊँ,  
बिना हुये कदु-मधु का अनुभव  
कोई राग विराग न होता ।

है अनिवार्य यहाँ पर अन्वय  
यह जीवन मूल्यों का मेला,  
वही सफल जिम ने अभिनय को  
केवल खेल समझ कर खेला,  
दुन्दुभीत रण विमुख पार्थ का  
दैन्य ज्ञानमय त्याग न होता ।

निर्गुण सत्य किन्तु साथ ही  
सत्य प्रकृति की निर्गुण सत्ता,  
बिना नियति को भोगे छुटे  
ऐसी किस चेतन में क्षमता ?  
प्रेम योगिनी भीरा उमका  
खडित कभी सुहाग न होता ।

सन्दर्भ !

तोड़ कर

मौन की शिला

तराशती है

चेतना

सन्दर्भ की छेनी से

सार्थक शब्द

होता

सन्धी के माध्यम से

व्यक्त

मप्रेषण का सत्य ।

## शहर-गाँव !

आ गया  
शहर मदारी की  
पकड़ में  
गाव बन्दर,  
देख उसे  
किकियाते  
रिरियाते  
घर दिया  
रगीन एनक  
आखों पर  
बदल गया  
हरियाले खेतों में  
पाषाणी बजर  
ठगा गया  
बेचारा  
बधुआ खेतिहर ।

अमृत-रस !

कहा है

इतिहास की

मृत घटनाओं में

पौराणिक गाथाओं का

अमृत रस ?

नहीं है

कक्षम तलवार भांजने वाले

गघ्राटी के

चतुर्दिक

तेमा कीई प्रभा मडल

जो कर देता हा

अतम की चेतना को

चमस्कृत !

यह तो है

मिथकीय पात्रों के

व्यक्तित्व का अप्रतिम तेजस्

जिम की छुअन मात्र से

हो उठता है महमा प्रदीप्त

जातीय जीवन का

निष्प्रभ होता दीप !

सत्य !

छोड़ कर  
किम के भरोसे  
निरीह बच्चे  
उड़ जाती चिड़िया  
दाना चुगने ?

रखकर  
किम की सुरक्षा में  
नवजात शावक  
चली जाती शेरनी  
शिकार करने ?

नहीं खेल पाती  
ममता  
निर्मम भूख की  
चुनौती ।

आत्मा !

तोड़ लिया  
अधखिला फूल,  
चुभ गया  
नीचे पड़ा शूल,  
निकल आई  
रक्त की बूद  
थी जिसमें प्रतिबिम्बित  
मृत गुलाब की  
आत्मा ।

## अनुभूति !

समय

एक

अनुभूति

व्यक्त करती जिसे

भावुक सृष्टि

लिख कर

दिवस क पन्ने पर

रात की म्वाही से

तारों क अक्षरों में

नैसर्गिक कविताएँ

गाते सस्वर जिन्हे

मयूर, चातक,

कोकिल मधुकर

ध्वनित धरती

प्रतिध्वनित अम्बर ।



शुद्ध ।

हर प्रवाह के साथ रहेगा  
निश्चित ही तट,  
हर पथ देता गोल नयन  
सुन पग की आहट,  
जड़ का सहज स्वभाव  
प्रगति का साथ निभाता,  
चेतन विन्दु कृतज्ञ  
तोड़कर आता नाता ।

**परमेश्वर !**

देता  
आकाश  
हर पांख को  
निमंत्रण  
पर  
नहीं देता  
शरण ।

बाज हो  
या कबूतर  
सब को  
सहान का  
सम थवसर,

पहुँच कर  
ऊपर  
करेगा क्या  
कोई  
यह दृष्टि पर  
निर्भर ।

## संवेदना का सत्य !

टक जाते  
होते सांक  
बन कर  
मितारे  
घरती के नारे आंमू  
आकाश में,

बिम्बर जाती  
होते भोर  
बन कर धूप  
आकाश की मारी जलन  
घरती पर,

यही है  
संवेदना का सत्य  
जो नहीं  
बिगडने देता  
सृष्टि का  
मन्दलन ।

चिडम्बना !

बिना हुये  
प्रतिक्रियाओं से  
मुक्त  
वैसे अनुभव करेगा  
मन  
क्रिया की सत्ता १  
नाचता रहेगा  
बध कर  
विभाव के घागे से  
कठपुतली की तरह,  
रह जायेगा  
बन कर  
मात्र दृश्य वह  
जो है  
स्वयं द्रष्टा ।

दुर्घटनाएं !  
बैठी रहती  
दम माघ कर  
ताक में  
मक्कार दुर्घटनाएं,  
नहीं दिखती  
बेचारे शिकार को  
घटने से पहले,  
पहने रहती  
चेहरों पर  
किसिम किसिम के  
सुन्नीटे  
होते ही हादमा  
खा जाती  
लम्हे भर में  
तहलके के जगल में,  
नहीं उभरते  
आकाश की छाती पर  
इन कजाओं के  
खुनी पंजों के निशान ।

## समुद्र !

बरसाते  
आत्मज भेष  
पीयूष,  
भर देती  
सट की नमी  
कठोर नारियल में  
मधु नीर,

सुना है  
पी लिया था  
शिव ने गरल  
पर नहीं बदला  
स्वभाव  
रहे खारे के खारे

रह जाते  
ललक कर  
अंशुरि भर  
जल के लिये  
सृपित बेचारे ।

हुबो हुबो  
चचु  
चुगते  
मछलियां  
भूखे जल पंछी  
बुकाते  
उदर की ज्वाला

पर नहीं बुका पाते  
बघर की प्यास,  
वैसी विडम्बना !

## उपेक्षिता !

फूले

नयना की नीरव

घाटियों में

यादों के अनगिन

हर सिंगार,

चू पड़ते

संवेदना के

धीमे से सस्पर्श से

उजले अश्रु-सुमन,

काश ! चीन इन्हें

गूथ पाती

किसी की सुकुमार अगुलियाँ

एक दिव्य हार

तो उतर आता

ललक कर,

स्वर्ण सिंहासन पर बैठा

निष्ठुरता का राजकुमार

लेने के लिये

यह अनमोल उपहार,

हो जाते उसी क्षण सुन्दर

किसी उपेक्षिता के

गूंगे गृह-द्वार ।

